उपसंहार

पुस्तक का यह द्वितीय भाग तीन खण्डों में विभाजित है, जिसमें से पहला शिवोपासना दूसरा शिवोपासक तथा तीसरा शैव-तीर्थ से सम्बन्ध रखता है। पहले खण्ड में शिवोपासना से संबंधित अनेक पहलुओं यथा षोडशोपचार-पूजा, पार्थिवलिंगपूजा, मानसपूजा, विविध प्रकार के स्तोत्र, व्रत, मन्त्र एवं कवच आदि पर प्रकाश डाला गया है। शिवोपासकखण्ड में भगवान् शिव के हर प्रकार के भक्तों जैसे देवकोटि के, असुर, गन्धर्व, ऋषि तथा मानव आदि कोटि के प्रमुख भक्तों की प्रेरक गाथाएँ दी गयी हैं जो प्रकारान्तर से भगवान् शिव की महिमा के ही द्योतक हैं। शैवतीर्थखण्ड के अन्तर्गत कुछ प्रमुख शैवतीर्थों, जैसे द्वादश ज्योतिर्लिंगों, अष्टमूर्तियों के तीर्थों आदि का वर्णन किया गया है।

पुस्तक की विषयवस्तु का आधार हमारे प्रामाणिक धार्मिक ग्रन्थ ही हैं। अर्थात् इस पुस्तक में प्रतिपादित सभी विचार ग्रन्थों पर आधारित हैं। बुद्धिवादी लोगों की दृष्टि में पुराणों की यह बात खटकती है कि इनमें जहाँ जिस देवता, तीर्थ, मन्त्र, व्रत, स्तोत्र और कवच का वर्णन किया गया है वहाँ उसी को सर्वोपरि माना गया है। गहराई से न देखने पर यह बात अवश्य ही बेतुकी सी लगती है। परन्तु इसका तात्पर्य यह है कि एक ही परिपूर्ण भगवान् विभिन्न-विचित्र लीलाव्यापार के लिये और विभिन्न रुचि, स्वभाव तथा अधिकार सम्पन्न साधकों के कल्याण के लिये अनन्त विचित्र रूपों में प्रकट होते हैं। भगवान् के ये सभी रूप नित्य, पूर्णतम और सच्चिदानन्दस्वरूप हैं। अपनी-अपनी रुचि और निष्ठा के अनुसार जो जिस रूप और नाम को इष्ट बनाकर भजता है, वह उन्हीं नाम और रूपों के माध्यम से समस्त रूपमय एकमात्र भगवान् को ही प्राप्त करता है। क्योंकि भगवान् के सभी रूप परिपूर्णतम हैं और उन समस्त रूपों में एक ही भगवान् लीला कर रहे हैं।

भगवान् के किसी भी नाम और रूप में अन्तर करना नामापराध में गिना जाता है। अत: भगवान् के सभी नाम एवं रूप समान फल देनेवाले हैं। भगवान् के नाम, रूप एवं गुणों के आधार पर ही विविध प्रकार के मन्त्र, स्तोत्र एवं कवच निर्मित हुए हैं। अत: विविध मन्त्रों, स्तोत्रों एवं कवचों में भी फल की दृष्टि से श्रेष्ठ या अवर समझना अपराध ही माना जायेगा। यही बात व्रतों एवं तीर्थों पर भी लागू होती है। भगवान् के विभिन्न नाम-रूपों की उपासना करनेवाले संतों, महात्माओं और भक्तों ने अपनी कल्याणमयी सत्साधना के प्रताप से विभिन्न रूपमय भगवान् को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार नाम-रूप में अपने ही साधना के स्थान में प्राप्त कर लिया और वहीं उनकी प्रतिष्ठा की। एक ही भगवान् अपनी पूर्णतम स्वरूपशक्ति के साथ अनन्त स्थानों में अनन्त नाम-रूपों में प्रतिष्ठित हुए। भगवान् के प्रतिष्ठास्थान ही तीर्थ हैं, जो श्रद्धा, निष्ठा और रुचि के अनुसार सेवन करनेवाले को यथायोग्य फल देते हैं। यही तीर्थ रहस्य है। इस दृष्टि से प्रत्येक तीर्थ को सर्वोपरि बतलाना उचित ही है।

शास्त्रों में किसी तीर्थ, मन्त्र, कवच, स्तोत्र आदि को सर्वश्रेष्ठ कहने का तात्पर्य यह सिद्ध करना नहीं है कि अन्य सब तीर्थ, मन्त्र, कवच आदि निकृष्ट हैं, अवर हैं। अपितु सर्वश्रेष्ठ कहने के पीछे शास्त्र की मंशा विविध प्रकार की रुचिवाले लोगों की श्रद्धा को बढ़ाना या पुष्ट करना है। साथ ही किसी तीर्थ या मन्त्र आदि के गौरव को प्रदर्शित करने का यह एक तरीका भी है। अनेक कारणों जैसे दूरी, अर्थ की कमी, स्वास्थ्य से सभी व्यक्तियों को सभी तीर्थ समान रूप से सुलभ नहीं हो सकते। न ही सभी तीर्थों में सबकी समान रुचि हो सकती है। यही बात मन्त्रों, कवचों, स्तोत्रों एवं व्रतों पर लागू होती है। जिस व्यक्ति को जिस मन्त्र, स्तोत्र या कवच का ज्ञान है, जो उसे सम्पादन करने में सरल लगता है उसे उसी में निष्ठा रखकर उसका प्रयोग करना चाहिये। उसकी निष्ठा को बढ़ाने के लिये ही शास्त्रों में उसे सर्वोपरि कहा गया है। व्रतों के बारे में भी यही बात लागू होती है। जो व्रत जिसे पालन करने में सरल लगता है उसे ही श्रेष्ठ बताकर उसमें आस्था को अडिग कराना ही शास्त्रों का उद्देश्य रहा है। क्योंकि प्रत्येक मन्त्र, कवच, स्तोत्र, व्रत, तीर्थ श्रद्धा के अनुसार ही फल देते हैं। दूसरे शब्दों में सभी तीर्थ, कवच, स्तोत्र, व्रत तथा मन्त्र फल की दृष्टि से समान हैं कोई बड़े छोटे नहीं है। ज्ञान की दृष्टि से सभी समान रूप से फल देनेवाले हैं। व्यवहार में हम अवश्य ही अपनी रुचि या भेद-दृष्टि के कारण किसी को ऊँचा और किसी को नीचा कहते हैं पर तात्त्विक दृष्टि से किसी में कोई अन्तर नहीं है। इस दृष्टि को प्राप्त कराने के लिये ही शास्त्रों ने प्रत्येक को सर्वश्रेष्ठ कहा है चाहे वे तीर्थ हों चाहे मन्त्र या स्तोत्र। सभी सर्वश्रेष्ठ हैं अर्थात् सभी समान हैं, सभी एक ही तत्त्व से संबंध रखते हैं चाहे वे व्यावहारिक दृष्टि से भले ही अलग-अलग नाम, रूप, स्थान से जुड़े हों।

गरुड़ पुराण में कहा गया है कि "यह तीर्थ है, यह तीर्थ नहीं है-जो लोग इस प्रकार के भेदज्ञान को रखते हैं; उन्हीं लोगों के लिये तीर्थ-गमन और उसके उत्तम फल का विधान किया गया है, किन्तु जो 'सर्वत्र ब्रह्ममय है' ऐसा स्वीकार करते हैं, उनके लिये कोई भी स्थान अतीर्थ नहीं है। इन सभी स्थानों में स्नान, दान, श्राद्ध, पिण्डदान आदि कर्म करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। समस्त पर्वत, समस्त नदियाँ एवं देवता, ऋषिमुनि तथा संतों आदि से सेवित स्थान तीर्थ ही हैं।"

इदं तीर्थमिदं नेति ये नरा भेददर्शिनः।
तेषां विधीयते तीर्थगमनं तत्फलं च यत्।।
सर्वं ब्रह्मेति यो वेत्ति नातीर्थं तस्य किञ्चन।
एतेषु स्नानदानानि श्राद्धं पिण्डमथाक्षयम्।।
सर्वा नद्यः सर्वशैलाः तीर्थं देवादिसेवितम्।। (गरुडपुराण आचारकाण्ड 81/25-27)

इसी प्रकार भविष्यपुराण में भगवान् श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से कहते हैं – हमने (अलग – अलग) व्रतों में अनेक (अलग – अलग) देवताओं का पूजन आदि कहा है, परन्तु वास्तव में इन देवों में कोई भेद नहीं। जो ब्रह्मा है वही विष्णु है, जो विष्णु है वही शिव है, जो शिव है वही सूर्य है, जो सूर्य है वही अग्नि है, जो अग्नि है वही कार्तिकेय है, जो कार्तिकेय है वही गणपति है, अर्थात् इन देवताओं में कोई भेद नहीं है। इसी प्रकार गौरी, लक्ष्मी, सावित्री आदि शक्तियों में भी भेद का लेश नहीं है। चाहे जिस देवी – देवता के उद्देश्य से व्रत करे, पर भेदबुद्धि न रखे, क्योंकि सब जगत् शिव – शक्तिमय है (दूसरे शब्दों में सभी व्रतों का फलदाता एक है और इसीलिये सभी व्रत समान रूप से फलदायी हैं)।

यो ब्रह्मा स हरिः प्रोक्तौ यो हरिः स महेश्वरः।
महेश्वरः स्मृतः सूर्यः सूर्यः पावक उच्यते।।
पावकः कार्तिकेयोऽसौ कार्तिकेयो विनायकः।
गौरी लक्ष्मीश्च सावित्री शक्तिभेदाः प्रकीर्तिताः।।
देवं देवीं समुद्दिश्य यः करोति व्रतं नरः।
न भेदस्तत्र मन्तव्यः शिवशक्तिमयं जगत्।।

(भविष्यपुराण, उत्तरपर्व 205/11-13)

अतः निष्कर्ष यह है कि व्यक्ति किसी भी मन्त्र, किसी भी कवच, स्तोत्र, व्रत या तीर्थ का प्रयोग कर सकता है। सभी समान रूप से फल देनेवाले हैं। अपनी – अपनी रुचि, साधन, सुविधा, स्वास्थ्य आदि के आधार पर इन सबका सेवन करना चाहिये। इन सबके सेवन का फल आस्था, विश्वास, भक्ति या भाव पर निर्भर करता है। अपने आप में कोई मन्त्र, तीर्थ, स्तोत्र, कवच आदि न तो श्रेष्ठ हैं न अवर। हमारी आस्था या मान्यता ही उन्हें श्रेष्ठ या अवर बनाती है।